हाजो का
माणिकूट उत्सव

बहुलता का एक जश्न

शोफिउल अलोम पठान

पुस्तिका सीरीज़-94

प्रकाशक :

***isd* इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**

फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस, 62-ए,

लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली-110067

टेलीफोन : 091-011-26177904, टेलीफैक्स : 091-011-26177904

ई-मेल : prakashan.isd@gmail.com, notowar.isd@gmail.com

वेबसाइट : www.isd.net.in

कॉपीराइट © : इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी, 2021

प्रकाशन वर्ष : 2021

सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित पूर्वानुमति के बिना इस शोध-पुस्तिका या इस शोध-पुस्तिका के किसी भी अंश को न तो पुन:प्रकाशित किया जा सकता है और न ही किसी भी अन्य तरीके से, किसी भी रूप में इसका व्यावसायिक उपयोग किया जा सकता है।

परिचय

दक्षिण एशियाई उपमहाद्वीप एक विशिष्ट राजनीतिक और सामाजिक इतिहास समेटे हुए है। सदियों से इस इलाक़े में विभिन्न जातीय, भाषाई और धार्मिक समूह साथ-साथ रह रहे हैं। आमतौर पर लोकप्रिय और साथ ही अकादमिक लेखन और भाषणों में बहुउल्लिखित शब्दावली 'विविधता में एकता' को भारतीय समाज के संदर्भ में समझने का एक रोचक और आसान तरीका है समाज की अंतर्निहित बहुलतावादी प्रकृति को समझना—जहाँ अलग-अलग पृष्ठभूमियों/परिवेशों से आए लोगों ने मिलकर सहअस्तित्व की एक साझी रवायत बनाई। भारत के पहले प्रधानमंत्री और उपनिवेशवाद विरोधी आंदोलन के अगुआ जवाहरलाल नेहरू ने अपने एक लेख—'द यूनिटी ऑफ इंडिया' में लिखा है कि बहुत से पश्चिमी चिंतक भारतीय समाज की विविधता और भेदों से अत्यधिक प्रभावित रहे हैं। पर यही चिंतक भारतीय समाज को सदियों से एक बनाए रखने वाले पहलुओं को पहचान पाने से चूक गए। पूरे उत्तरी भारत में फलने-फूलने वाली हज़ारों साल पुरानी सिंधु सभ्यता से शुरू में अनगिनत विजेताओं, सौदागरों, छात्रों ने एशिया के विभिन्न हिस्सों से भारत के मैदानी भागों में प्रवेश किया। इन सबने भारतीय समाज, जीवन, संस्कृति और राजनीति पर अपना असर डाला। यह सभी धाराएँ सहज ही भारतीय समाज में समाहित हो गईं या उन्होंने अपनी जगह बनाई जिसने भारतीय समाज को और विविध तथा संवेदनशील बनाया। इन सब बदलावों के बाद भी भारत ने अपनी अनूठी इयत्ता को बनाए रखा। नेहरू ने इसकी तुलना समंदर में हजारों नदियों के मिलने से की है (नेहरू 1938, पृ. 231-234)। यहाँ वे विविध संस्कृतियों को और परंपराओं को नदी तथा विविध, विशाल पर फिर भी एक सूत्र में बँधे भारत को समंदर के रूप में देख रहे हैं।

असम में विभिन्न धार्मिक, सजातीय और भाषाई समूहों के बारे में समकालिक परंपरा को उजागर करने वाला एक दिलचस्प और अनोखा सांस्कृतिक जुलूस होता है।

गुवाहाटी से करीब 24 किलोमीटर दूर हाजो में हर साल एक अंतर्धार्मिक, धार्मिक-सांस्कृतिक जुलूस निकाला जाता है। इसे 'साम्प्रदायिक सद्भाव मार्च' भी कहा जाता है। 2018 में इसने अपना 25 वाँ वर्ष पूरा किया। जुलूस पोवा मक्का मस्जिद (एक सूफी संत की मज़ार) से शुरू होकर हयग्रीव माधव मंदिर (असम का एक प्रसिद्ध मंदिर) में समाप्त होती है और इस प्रकार उत्सव का समापन होता है। दोनों जगहें एक दूसरे से 6 किलोमीटर दूर हैं। जुलूस रैली पोवा मक्का के ख़ादिम[1] और हयग्रीव माधव मंदिर के डोलोई[2] के गले मिलने से शुरू होती है। रैली के बाद के उत्सव को 'मणिकूट उत्सव' कहा जाता है। जुलूस में आम लोगों के साथ सैकड़ों गणमान्य व्यक्ति भी शामिल होते हैं। इसमें प्रमुख गायक, लेखक, बुद्धिजीवी, साहित्यकार और राज्य तथा राज्य के बाहर के अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तित्व शामिल हैं। इस रैली में शामिल होना सम्मान की बात है। जिकिर, नाम-प्रसंग, बिहू-गीत[3] और अन्य लोकविधाओं का प्रदर्शन समाज के साझेपन और साम्प्रदायिक सद्भाव की एक बहुरंगी घोषणा है।

हमारी सांस्कृतिक विरासत के हिस्से के रूप में साझी और समन्वित संस्कृति हमारी सोच पर हावी है और इसने हमारे जीने के तरीके को प्रभावित किया है। इससे जुड़ी कहानियाँ, तथ्य हमारे शिक्षण तथा अन्य संस्थानों में पढ़ाए जाते हैं। सांस्कृतिक विरासत की इन छोटी लेकिन महत्वपूर्ण घटनाओं को सामने लाकर लोग वास्तव में विभिन्न धार्मिक, जाति, जनजाति और अन्य जातीय समुदायों के बीच शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के महत्व को महसूस कर सकते हैं। इन बड़े आख्यानों के साथ-साथ हाजो के मणिकूट उत्सव और अंतर्धार्मिक जुलूस हमारी साझी संस्कृति की जीती-जागती मिसाल के रूप में सामने हैं। अपनी साझी सांस्कृतिक विरासत की छोटी पर ज़रूरी घटनाओं को रेखांकित करना इसलिए भी ज़रूरी है ताकि लोग विभिन्न धर्मों, जाति-जनजातियां और नृवंशीय समूहों के बीच शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की वास्तविक ज़रूरत को महसूस कर सकें। भारत में धर्मनिरपेक्ष लोकाचार और विविधता का नाम है हाजो, जो उन्मादी सोच और व्यवहार के सामने एक मजबूत उदाहरण के रूप में खड़ा है।

यह उत्सव हर साल ऑल हाजो स्टूडेंट्स यूनियन (ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) की एक स्थानीय इकाई) के बैनर तले मनाया जाता है जिसमें स्थानीय लोगों सहित राज्य भर के लोगों की भारी भागीदारी होती है। हर साल स्थानीय AASU नेता इस आयोजन में अग्रणी भूमिका निभाते हैं। यह रैली पहली बार स्थानीय लोगों और मणिकूट साहित्य समाज नामक एक संगठन द्वारा जनवरी 1992 में शुरू की गई थी। इसी साल दिसंबर में बाबरी मस्जिद विध्वंस हुआ था। विध्वंस के बाद जब भारत में साम्प्रदायिक दंगे जंगल की आग की तरह फैल रहे थे तब असम के

कुछ हिस्सों में भी हिंसक झड़पें हुईं। इस स्थिति ने राज्य के हिंदुओं और मुसलमानों के बीच चले आ रहे सदियों पुराने सौहार्द के लिए खतरा पैदा कर दिया। ऐसे में AASU जैसे संगठनों के साथ कुछ उदारवादी लोगों ने मणिकूट उत्सव के रूप में साम्प्रदायिक सद्भाव और भाईचारे के संदेश को इस आयोजन के माध्यम से कायम रखने की पहल की। यह स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं है कि ऑल हाजो छात्र संघ ने मणिकूट साहित्य समाज से कार्यक्रम के आयोजन का कार्यभार क्यों और कैसे लिया लेकिन यह निश्चित रूप से जाना जाता है कि वे वर्ष 1993 से लगातार इसका आयोजन कर रहे हैं। हाजो के पास हमेशा अपने पवित्र मुस्लिम तीर्थस्थान, मंदिर और वैष्णव सत्र[4] के साथ एक धर्मनिरपेक्ष विरासत थी। इसे मुसलमानों, हिंदुओं और यहाँ तक कि बौद्धों के लिए भी पवित्र तीर्थ माना जाता है। हाजो प्राचीन काल से असम के 'त्रिवेणी संगम' (तीन धाराओं का संगम) के नाम से प्रसिद्ध है। 11 वीं शताब्दी के कालिकापुराण जैसे कुछ पुराने ग्रंथ में भी हाजो का उल्लेख है और यह पाँच प्रसिद्ध हिंदू मंदिरों का घर है। इसे पंचतीर्थ के नाम से भी जाना जाता है। इनमें से मणिकूट पहाड़ी की चोटी पर स्थित हयग्रीव माधव सबसे प्रसिद्ध है। वहीं गरुड़ाचल पर्वत पर पोवा मक्का सबसे प्रमुख इस्लामी तीर्थस्थलों में से एक है जहाँ 1300 ईस्वी के सूफी संत गयासुद्दीन औलिया का मक़बरा स्थित है। दूसरी तरफ़ भूटान, तिब्बत, नेपाल और अरुणाचल प्रदेश के कई बौद्ध मानते हैं कि हाजो में साल के एक पेड़ के नीचे गौतम बुद्ध को महापरिनिर्वाण प्राप्त हुआ था।

असम का साझा सांस्कृतिक इतिहास :

असम एक ऐसा राज्य है जहाँ सजातीय, भाषाई, धार्मिक समूह, जातीय, जनजातीय, विविधता बहुत अधिक है। असमिया एक निश्चित या कठोर नहीं बल्कि एक ऐसी पहचान है जो कई अलग-अलग जातीय, धार्मिक और भाषाई पहचानों के सांस्कृतिक लेन-देन से उभरी है। प्राचीन काल से 19वीं शताब्दी ईस्वी तक कई समूहों ने असम में प्रवास किया जिनमें शक्तिशाली अहोम भी शामिल थे जिन्होंने छह सौ वर्षों (1226-1826 ईस्वी) तक यहाँ शासन किया। ये सभी प्रवासी समूह अपनी अनूठी संस्कृति, खान-पान, रीति-रिवाज, त्योहार अपने साथ लाए और क्रमशः इन सभी तौर-तरीकों और पहचानों के आपसी संवाद और संयोग से एक असमिया पहचान की निर्मिति हुई। उत्तर मध्यकाल से शुरू होकर समकालीन असमिया समाज पर संत शंकरदेव (1449-1569) और 17वीं सदी के सूफ़ी संत अज़ान पीर (जिन्हें शाह

मिलन के नाम से भी जाना जाता है) का प्रभाव और योगदान असम की समृद्ध और साझी सांस्कृतिक विरासत को समझने का एक उत्कृष्ट माध्यम है। सांस्कृतिक इतिहास के संदर्भ में असम को 'शंकर-अज़ान' की भूमि के रूप में भी जाना जाता है। 'शंकर-अज़ान' शब्द का मूल विचार उस सौहार्दपूर्ण और साझा हिंदू-मुस्लिम संबंधों को संदर्भित करता है जो मध्यकाल से असम के समाज में फला-फूला। वास्तव में कई मुस्लिम सैनिक और सेनापति अहोम सेना का हिस्सा थे। इस उदाहरण में बाग हज़ारिका नाम के प्रसिद्ध मुस्लिम उप सेनापति का नाम शामिल है जिन्होंने अपने सेनापति लचित बोरफुकन की कमान में 1671 ईस्वी में सरायघाट की प्रसिद्ध लड़ाई में शक्तिशाली मुगल सेना को हराया था।

संत शंकरदेव असम के सबसे प्रभावशाली धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतीक बने हुए हैं जिन्होंने जाति, पंथ और अन्य पदानुक्रमों की बाधाओं को दूर करने का आह्वान करके नव-वैष्णववाद के विचार का प्रचार किया। नव-वैष्णव आंदोलन असम में शंकरदेव द्वारा शुरू किया गया था जो अभी भी धार्मिक और सांस्कृतिक प्रथाओं का सबसे लोकप्रिय रूप है। इसने जाति, जनजाति, धार्मिक आदि विभिन्न खाँचों में बँटे असमिया लोगों को एक किया। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि नव-वैष्णववाद ने (तथाकथित) निचली जातियों के लोगों को (तथाकथित) उच्च जातियों के लोगों के साथ सामाजिक-धार्मिक-सांस्कृतिक स्थानों में भाग लेने और इस प्रकार जातिगत भेदभाव को ख़त्म करने की कोशिश की। शंकरदेव ने असम में हिंदू समाज के कठोर जाति व्यवस्था की आलोचना की। यद्यपि जाति हिंदू असमिया सामाजिक व्यवस्था में अभी भी प्रमुख है। एक सरन नाम धर्म (एक ईश्वर में विश्वास) शंकरदेव के इस उपदेश ने असम के लाखों लोगों को प्रभवित किया। एक उदार, सहिष्णु और जातिविहीन धर्म का विचार लोगों को आकर्षित कर रहा था। शंकरदेव का धर्म का विचार भक्ति आंदोलन से प्रभावित था जहाँ भक्तों को कीर्तन के माध्यम से हरि, राम जैसे उनके नाम का जप करके अपनी इच्छा को एक भगवान यानी भगवान विष्णु को समर्पित करना होता है। 1449 ईस्वी में जन्मे शंकरदेव के न केवल हिंदू बल्कि अन्य धर्मों के अनुयायी भी थे। नव-वैष्णववाद के माध्यम से शंकरदेव की सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति ने उदार और सहिष्णु धार्मिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों का प्रचार करके असम में संपूर्ण ब्रह्मपुत्र घाटी के समाज और संस्कृति को बदल दिया। बहुत से लोग उन्हें असम का सबसे बड़ा आध्यात्मिक नेता मानते हैं जिन्होंने आम लोगों के लिए धार्मिक प्रथाओं को सरल बनाया और उनके लिए स्थानीय भाषा में कई धार्मिक ग्रंथों का अनुवाद किया। धर्म के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण के शंकरदेव के उपदेश और

कई धार्मिक-सांस्कृतिक संस्थानों की नींव ने असम में पुनर्जागरण के एक नए युग की शुरुआत की। इस नई परिघटना ने धार्मिक परंपराओं के साथ-साथ संस्कृति के क्षेत्र में भी अपनी भूमिका निभाई और कला तथा संगीत के क्षेत्र में लोकगीत, अंकियानाट जैसे रूप सामने आए। उनके अनुयायी एक थिएटर रूप का उल्लेख करते हैं जिसे संत श्रीमंत शंकरदेव द्वारा पहली बार शुरू किया गया था जो बाद में जनता के बीच तेजी से लोकप्रिय हो गया। नाट्य प्रदर्शन के ये रूप भागवत-पुराण और रामायण की कथाओं पर आधारित हैं। इस सांस्कृतिक हस्तक्षेप ने 'सतरिया नृत्य' के विचार को भी जन्म दिया जिसे 'एक-सरन-नाम-धर्म' के सिद्धांतों को व्यक्त करने के तरीकों के रूप में व्याख्यायित किया जा सकता है जो एक ही भगवान 'भगवान कृष्ण' या 'विष्णु' की भक्ति पर आधारित हैं। बराबरी और इंसानियत की मूल भावना से ओत-प्रोत इस भक्तिपरक नृत्य परंपरा को असम में नामघर संस्थानों ने एक ठोस अभिव्यक्ति दी। नामघर सरल शब्दों में संत शंकरदेव के नव-वैष्णव अनुयायियों के पूजाघर हैं जोकि आमतौर पर एक खुला प्रार्थना कक्ष होता है।

असम का साझा इतिहास इस्लामी सूफीवाद के ज़िक्र के बिना अधूरा है। दरअसल नव वैष्णववाद और सूफी मत इसके दो मज़बूत आधार हैं। श्रीमंत शंकरदेव के बाद अज़ान फ़कीर का नाम असम के सर्वाधिक महत्वपूर्ण धार्मिक प्रतीक के रूप में है।

हालाँकि, गौर करने की बात है कि असम 1203 ईस्वी में मुसलमानों के संपर्क में आया लेकिन व्यापक स्तर पर इस्लाम का प्रचार 17 वीं शताब्दी के शुरुआती दशक में हुआ। शाह मिलन जिसे 'अज़ान फकीर' के नाम से भी जाना जाता है जो 1603 ईस्वी में असम चले गए थे ने सूफीवाद के माध्यम से इस्लाम के विचार को फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। अज़ान फ़कीर आज तक असम के सबसे महत्वपूर्ण आध्यात्मिक और धार्मिक शख्सियतों में से एक हैं जिसने यहाँ के समाज को एकजुट करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उन्होंने बहुत ही सरल असमिया भाषा में इस्लाम के मूल सिद्धांतों को मूर्त रूप देते हुए भक्ति गीतों की रचना की, जिन्हें ज़िकिर और ज़री कहा जाता है। इस्लाम के प्रचार का उनका अनोखा तरीका उस दौरान इस्लाम के जनता में फैलने का प्रमुख कारण बना। शाह मिलन और उनके शिष्यों को अहोम राजाओं द्वारा उदारतापूर्वक संरक्षण दिया गया था और उनमें से कुछ को मक्का जाने और हज (मुसलमानों की वार्षिक तीर्थयात्रा) करने के लिए राज्य और शासक की समृद्धि के लिए प्रार्थना करने के लिए खर्च भी दिया गया था।

केवल अज़ान फ़कीर ही नहीं बल्कि अन्य सूफी संत भी जो इतिहास के अलग-अलग कालखंडों में असम गए। हाजो असम के समृद्ध और साझा सांस्कृतिक

इतिहास का एक आदर्श प्रतिनिधित्व है जहाँ अभी भी हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिक सद्भाव काफी हद तक मौजूद है। उल्लेखनीय है कि असम में भी हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता व्यक्त और अव्यक्त दोनों रूपों में मौजूद है। हालाँकि इस क्षेत्र के साझा इतिहास ने अभी तक भारतीय उपमहाद्वीप के कई दूसरे हिस्सों की तरह यहाँ हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता का एक संगठित रूप विकसित नहीं होने दिया है।

लिखित और मौखिक परंपरा में हाजो :

असम में ब्रह्मपुत्र नदी के उत्तरी तट पर स्थित हाजो एक राजस्व मंडल का भी नाम है जिसमें 137 गांव शामिल हैं और दो विकास प्रखंड अर्थात् हाजो और सुआलकुची हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार कामरूप जिले के हाजो मंडल की कुल जनसंख्या 2,62,531 है। लेकिन विशेष रूप से हाजो गाँव के बारे में बात की जाए तो 2011 में भारत की जनगणना के अनुसार इसकी आबादी 17,630 है जिसमें से 8,901 पुरुष और 8,729 महिलाएँ हैं। वर्तमान समय में हाजो कई व्यावसायिक संस्थाओं के केंद्र में है और फल-फूल रहा है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है प्राचीन काल से हाजो को विभिन्न नामों से जाना जाता है। कालिकापुराण (सैकिया, 2009) नामक धार्मिक ग्रंथ में पाए जाने वाले सबसे प्रमुख प्राचीन नाम अपुनर्भव और मणिकूट हैं।

हाजो के प्राचीन नामों का ज़िक्र 14वीं शताब्दी में रचित योगिनीतंत्र में विष्णुपुष्कर के रूप में लिखा गया है। दर्रंग राजबोंगखावली में हाजो मणिकुटग्राम कहा गया है। असम में बुरंजी[5] लिखने के समय से और वैष्णववाद के समय से औपचारिक रूप से हाजो नाम का प्रयोग किया जाता है। हालाँकि हाजो नाम से जुड़ी कई लोक परंपराएं हैं। कुछ लोगों का कहना है कि कलि और द्वापर (समय की वैदिक धारणा) के बीच के समय में इस स्थान पर कई भिक्षु ध्यान किया करते थे। पर, कई राक्षसों की अशांति के कारण भिक्षुओं को अपनी समाधि तोड़नी पड़ी और चिल्लाना पड़ा—'हत-योग', 'हा-योग' आदि। धीरे-धीरे उस शब्द से हाजो नाम अस्तित्व में आया। एक अन्य लोकप्रिय मौखिक परंपरा कहती है कि बुद्ध को अपना महापरिनिर्वाण यहीं मिला था। उनके शिष्य 'हा-आ-जू' (सूर्यास्त) का नारा लगाते हुए इसका शोक मना रहे थे। उसी समय से हाजो नाम अस्तित्व में आया। दिलचस्प बात यह है कि हाजो नाम की एक मुस्लिम परंपरा भी है। पोवा मक्का दरगाह हाजो में है और लोगों का मानना है कि अगर कोई हाजो की यात्रा करने जाता है तो उसे हज (सऊदी अरब में मक्का की मुस्लिम तीर्थयात्रा) के बराबर आशीर्वाद मिलता है। इसलिए माना जाता है कि हज शब्द से हाजो नाम आया है। अन्य अलग-अलग कथाएँ हैं जैसे कि हज नाम

का एक राजा था जो इस स्थान पर शासन करता था और इसी तरह हाजो नाम अस्तित्व में आया। कोच, अहोम और मुगल इन सभी कालों में हाजो एक महत्वपूर्ण स्थान था। 16वीं शताब्दी के दौरान कोच राजा रघुदेव नारायण के शासन में हाजो को एक पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया था। उस समय राज्य का नाम कोच हाजो था। कोच हाजो पूर्व में बोर्नोडी से लेकर पश्चिम में कोंकोख नदी तक फैला हुआ एक बड़ा क्षेत्र था। रघुदेव नारायण के कोच हाजो में अविभाजित गोपलारा और असम के दर्रांग ज़िले के कुछ हिस्से शामिल थे। अहोमों के शासन काल में भी हाजो को एक महत्वपूर्ण स्थान माना जाता था।

हाजो में धार्मिक संस्थान और उनका महत्व :

हाजो को 'पंचतीर्थ' के नाम से भी जाना जाता है। हयग्रीव माधव मंदिर, केदारेश्वर मंदिर, कमलेश्वर मंदिर, कामेश्वर मंदिर और गणेश मंदिर इस पंचतीर्थ के पाँच स्तंभ हैं। इस पंचतंत्र की पूजा का मुख्य स्थान हयग्रीव माधव मंदिर है और यह हाजो में मणिकूट नामक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है। यहाँ भगवान विष्णु हयग्रीव के अवतार में विराजमान हैं। मंदिर के अंदर पूजा स्थल में हयग्रीव माधव की मूर्ति है। उसके दाहिनी ओर गोविंद माधव वासुदेव हैं जबकि बाईं ओर एक अन्य माधव और गरुड़ पक्षी हैं। मंदिर के निचले हिस्से में एक ऐतिहासिक तालाब है इसे विष्णु पुष्कर कहते हैं। लोगों का कहना है कि मंदिर का निर्माण छठी या सातवीं शताब्दी के आसपास हुआ था। एक बार जब मंदिर बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया तो कोच राजा रघुदेव नारायण ने 1583 ईस्वी में मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया। भूटान से कई लोग यहाँ पूजा करने आते थे क्योंकि उनके विश्वास अनुसार यह कभी एक बौद्ध मंदिर था। हाजो के बारे में लिखी एक स्थानीय असमिया किताब इसे पूर्वोत्तर भारत का जगन्नाथ मंदिर (पुरी) मानती है।

माधव मंदिर से थोड़ा दूर केदारेश्वर मंदिर है जो बहुत पुराना है और मदनाचल पहाड़ियों पर स्थित है। यहाँ भगवान शिव की पूजा की जाती है। इस केदारेश्वर मंदिर के साथ ही केदार तालाब है। केदार तालाब के किनारे कमलेश्वर मंदिर स्थित है। यहाँ शिव की पूजा की जाती है। मदनाचल पहाड़ियों के पश्चिमी ढलान की ओर गोकर्ण पहाड़ियों की चोटी पर कामेश्वर मंदिर स्थित है। यहाँ भी भगवान शिव की पूजा की जाती है और कामेश्वर मंदिर की ढलान पर गणेश मंदिर स्थित है। गणेश की मूर्ति विशाल चट्टान पर उकेरी गई है। अहोम राजा प्रमत्त सिंघा ने इस मंदिर को 1744 ई. में बनवाया था।

पंचतीर्थ से परे पोवा मक्का मुसलमानों के सबसे महत्वपूर्ण और पवित्र धार्मिक

स्थानों में से एक है जो हाजो में स्थित है। पोवा मक्का गरुड़ाचल पहाड़ियों की चोटी पर स्थित है। यह एक प्रशांत और विशाल जगह है। यहाँ गियासुद्दीन औलिया नाम के सूफी संतों में से एक की दरगाह है। वह ईरान के शाह परिवार से थे और प्रशासनिक/राजकीय पद पर थे। बाद में बुद्ध की तरह उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया और सत्तर अन्य संतों के साथ अलग-अलग जगहों पर इस्लाम धर्म का प्रचार करने के लिए निकल पड़े। फिर वे धीरे-धीरे गरुड़ाचल पहाड़ियों पर पहुँचे और यहाँ बस गए। इस जगह से ही इस्लाम का संदेश फैलाते हुए ये सूफी संत यहीं की मिट्टी में मिल गए। एक प्रचलित कथा यह भी है कि औलिया ने मक्का से एक पाव (250 ग्राम) मिट्टी लाकर दरगाह के आसपास की मिट्टी में मिला दी। इसलिए इस जगह को पोवा मक्का कहा जाता है। औलिया की कब्र पर मुगल शहंशाह शाहजहाँ के बेटे शुजाउद्दीन ने 1657 ईस्वी में निर्माण करवाया था। असम के कई मुस्लिम लोगों के लिए मक्का और मदीना के बाद पोवा मक्का सबसे पवित्र स्थान है। वास्तव में कई गरीब मुसलमान जो अपने दम पर हज यात्रा का खर्च नहीं उठा सकते हैं उनका मानना है कि अगर वे पोवा मक्का आते हैं तो उन्हें लगभग मक्का यात्रा के बराबर ही सवाब मिलता है।

हाजो में धार्मिक सहिष्णुता की संस्कृति :

हाल के दिनों में भारतीय संदर्भ में धार्मिक स्वतंत्रता व सहिष्णुता, पर्सनल लॉ, धर्मनिरपेक्षता जैसे मुद्दों की बहुत चर्चा रही है। प्रिंट मीडिया, टेलीविजन और अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म पर इन मुद्दों पर बहस होती रही है। कई लोगों का तर्क है कि धर्म, जाति, भोजन और कई अन्य मुद्दों से संबंधित हिंसा ने भारत का धर्मनिरपेक्ष लोकाचार दाँव पर लगा दिया है। इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो हाजो में साम्प्रदायिक सद्भाव और धार्मिक सहिष्णुता का एक दिलचस्प इतिहास है और यहाँ विभिन्न धर्मों के लोकप्रिय धार्मिक स्थान हैं। पोवा मक्का असम में मुसलमानों के सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक स्थलों में से एक है जिसे हाजो के सभी समुदायों और धार्मिक लोगों द्वारा स्वीकार किया गया है। यहाँ दरगाह मुगल राजा शाहजहाँ के बेटे द्वारा बनाई गई थी जब वह बंगाल का शासक था। अन्य गैर-मुस्लिम राजाओं ने अपने जीवन और समय में पोवा मक्का में योगदान दिया है। अहोम और कोच राजाओं ने भी दरगाह को महत्वपूर्ण चीजें दान की हैं। दर्रंगी राजा ने दरगाह को जमीन दान में दी थी। अहोम शासकों रुद्र सिंह, लखी सिंह, राजेश्वर सिंह और कमलेश्वर सिंह ने भूमि तथा अन्य मूल्यवान वस्तुएँ यहाँ उपहार स्वरूप दीं और दरगाह के सुचारू संचालन का

इंतज़ाम भी किया। प्रकाश दास अपने एक लेख में कहते हैं कि उनके स्कूल के दिनों में पोवा मक्का को 'मुकाम' भी कहा जाता था। उनके सभी दोस्तों, परिचितों में इसे इसी नाम से बुलाते थे। इस नाम से जुड़ी यादें आज भी उनके ज़ेहन में किसी रेशमी कपड़े सी दर्ज हैं। प्रारंभिक स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने हाजो कंदारम हायर सेकेंडरी स्कूल में दाखिला लिया। उन दिनों किसी भी वार्षिक स्कूल परीक्षा से पहले सभी छात्र मिलकर पहले केदार मंदिर जाते थे, प्रसाद खाते थे। फिर सभी मुकाम जाते थे और वहाँ मोमबत्ती जलाकर अपने स्कूल की परीक्षा के अच्छे परिणाम की प्रार्थना करते और फिर दरगाह में बँटने वाली सिन्नी (मस्जिदों और दरगाहों में दी जाने वाली एक प्रकार की मिठाई) खाते थे। वे कहते हैं कि वे अभी भी उस सिन्नी का स्वाद याद कर सकते हैं। ये लगभग 50 साल पहले की बात है तब सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेने में धर्म कोई मसला नहीं था। रोज़मर्रा की ज़िंदगी का यह साझापन आम जीवन का एक अहम हिस्सा था। यह किसी औपचारिक शिक्षा या शिक्षक द्वारा प्रदत्त ज्ञान नहीं बल्कि एक जीवनशैली थी।

हाजो की यात्रा के दौरान मुझे हाजो के कई स्थानीय निवासियों के साथ बात करने का अवसर मिला। उनके मौखिक बयानों में दिलचस्प अंतर्दृष्टि थी। एक साक्षात्कार में प्रकाश दास ने बताया कि —

> *'मध्यकाल के कोच साम्राज्य के दौरान हाजो को एक शहरी केंद्र के रूप में विकसित किया गया था। यहाँ पाँच देवालय मौजूद हैं जो मध्यकाल से बहुत पहले मौजूद थे। ये सभी पाँच देवालय एक ऐसे व्यक्ति द्वारा शासित होते हैं जो आसपास की भूमि और अन्य संपत्तियों की भी देखभाल करता है। उस व्यक्ति को डोलोई कहा जाता है। डोलोई हाजो में जीवन के सामाजिक-साँस्कृतिक पहलुओं को नियंत्रित करने वाले एक महत्वपूर्ण शख्स थे। वह एक राजा या राजा के समान थे पर अब ऐसा नहीं है। कामाख्या मंदिर में भी प्रमुख व्यक्ति को डोलोई के नाम से जाना जाता है... कोच राजा रघुदेव नारायण ने हाजो को कोच साम्राज्य की राजधानी बनाया। काला पहाड़ के समय में माधव मंदिर थोड़ा नष्ट हो गया था। रघुदेव नारायण ने शहर और मंदिरों का पुनर्निर्माण किया।*[6]

माधव मंदिर के साथ ही माधव पुखुरी नामक एक ऐतिहासिक तालाब है जिसे मौखिक परंपरा में विष्णु पुष्करम भी कहा जाता है।

हालाँकि हाजो धार्मिक स्थलों से भरा हुआ है पर इन सबके बीच आपसी

भागीदारी और संवाद सद्भाव बनाए रखने का काम करता है। आश्चर्यजनक लेकिन सुखद तरीके से हाजो के विभिन्न धार्मिक संस्थानों के बीच एक अंतर्धार्मिक सहभाग है। हाजो में धार्मिक परंपराओं की मिश्रित प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए एक स्थानीय विद्वान हिरेन सैकिया (उपनाम) कहते हैं—

'हाजो में पहले से ही साम्प्रदायिक सौहार्द की समृद्ध परंपरा रही है। इस अर्थ में यहाँ की संस्कृति भी मिली-जुली है। जैसा कि आप जानते होंगे ऐतिहासिक रूप से यहाँ हिंदू, इस्लाम और बौद्ध धर्म की एक साझी परंपरा रही है। पोवा मक्का दरगाह सहित यहाँ के पाँच मंदिर बहुत प्रसिद्ध हैं। जो लोग यहाँ मंदिर घूमने आते हैं वे पोवा मक्का या ऐसे ही पोवा मक्का जाने वाले मंदिर देखने भी जाते हैं। हाजो का माधव मंदिर पहले से ही एक बहुत बड़ा धार्मिक संस्थान है, यहाँ जुलूस निकलता है। जुलूस में भगवान माधव की मूर्ति को सुआलकुची (हाजो का एक नजदीकी स्थान) के घाट[7] ले जाया जाता है। उस जुलूस में कुछ लोग हाथ में लाठी लेकर जाते हैं और जुलूस के लिए रास्ता साफ कर जुलूस का नेतृत्व करते हैं। उन्हें ज़ौकधोरा कहा जाता है। ये मुस्लिम लोग हाजो के ही आसपास के इलाकों के रहने वाले हैं। माधव मंदिर के ठीक विपरीत दिशा में पुथिमारी नदी है। पुथिमारी नदी के उत्तरी किनारे पर दो पड़ोसी गाँव हैं; ठकुरिया पारा और सैकिया पारा। इन दोनों गाँवों में रहने वाले ये मुस्लिम लोग जुलूस के दौरान ज़ौकधोरा की भूमिका निभाते हैं। वे हाजो के माधव मंदिर के डोलोई चयन प्रक्रिया में भी मतदान कर सकते हैं। जब जुलूस मूर्ति के साथ मंदिर में लौटता है तो हाथों में लाठी पकड़ वे वापस उसका नेतृत्व करते हैं। यह परंपरा राजाओं के ज़माने से चली आ रही है।[8]

एक अन्य स्थानीय निवासी अच्युत दास (एक बुजुर्ग व्यक्ति) ने मुझे बताया कि—

जब केदार मंदिर में शिवरात्रि उत्सव होता है जो पोवा मक्का से सटा हुआ है तो लोग दरगाह और मंदिर के बीच भोजन का आदान-प्रदान करते हैं। पोवा मक्का के प्रतिनिधि शिवरात्रि के दौरान केदार मंदिर में कुछ भोजन ले आते हैं और केदार मंदिर के लोग उरुस[9] के दिन पोवा मक्का मंदिर में लोगों के लिए भोजन लाते हैं। इसे स्थानीय भाषा में सीढा कहा जाता है।

मणिकूट उत्सव : असम की अनूठी साझी विरासत को रेखांकित करना

मणिकूट साहित्य समाज, हाजो एक सांस्कृतिक संगठन है। हाजो की समन्वित संस्कृति का जश्न मनाने की जरूरत को ध्यान में रखते हुए हाजो में एक उत्सव की योजना बनाई गई। विचार 'हयग्रीव माधव मंदिर केंद्रित' रखते हुए त्योहार मनाने का था। हाजो को हमेशा उस स्थान के रूप में संदर्भित किया गया है जहाँ विभिन्न धार्मिक परंपराओं की उपस्थिति है। यह सोचा गया था कि यह जश्न उन पुरानी सांस्कृतिक विरासतों को पूरी तरह से प्रतिबिंबित करेगा। जिस पहाड़ी पर हयग्रीव माधव मंदिर स्थित है उसे मणिकूट कहा जाता है। इस प्रकार मणिकूट शब्द से सन्दर्भ लेते हुए संगठन का नाम मणिकूट साहित्य सभा रखा गया। इसे आम लोगों के लिए एक त्योहार के रूप में आयोजित किया गया था। इसी विचार के साथ 15, 16 और 17 जनवरी 1992 में पहली बार हाजो से साम्प्रदायिक सौहार्द का संदेश देने के लिए मणिकूट उत्सव का आयोजन किया गया। यह असमिया कैलेंडर के माघ महीने के पहले दिन से शुरू होता है। असम में इस दिन को बोर बिहू भी कहा जाता है। बिहू का पहला दिन संक्रांति का है जो पौष महीने के आख़िरी दिन पड़ता है। असल में बिहू का दूसरा दिन माघ की पहली तारीख को होता है और इसे लेकर लोग अक्सर गलती करते हैं। यहाँ पहली माघ को बहुत बड़ा मेला लगता है। इसे स्थानीय भाषा में माघ मेला कहते हैं। रोमन कैलेंडर के हिसाब से तारीखों में कुछ बदलाव हो सकते हैं पर तिथि के रूप में पहला माघ तय है। 15, 16 और 17 में से आमतौर पर 16 तारीख को बोर बिहू रहता है। हालांकि इसमें कभी-कभी फेरबदल भी हो जाता है। आमतौर पर इस उत्सव का उदघाटन समारोह महीने की 15 तारीख को होता है। महोत्सव के पहले उद्घाटन सत्र में असम के राज्यपाल को भी आमंत्रित किया गया था। हाजो में सदियों पुराना साम्प्रदायिक सौहार्द है और यहाँ हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता की शायद ही कोई गुंजाइश रही हो। जुलूस पोवा मक्का दरगाह गेट से शुरू होकर हयग्रीव माधव मंदिर तक जाता है। यहाँ विभिन्न धार्मिक-सांस्कृतिक समकालिक परंपरा को दर्शाती विविध सांस्कृतिक शोभायात्राएँ निकलती हैं। इनमें राभा, कचारी आदि आदिवासी समूह कोच, कलिता आदि हिंदू जातियाँ और मुसलमान सभी शामिल रहते हैं। हाजो के बाहर के कई अन्य समुदाय और जनजातियाँ भी जुलूस में शामिल होती हैं। पोवा मक्का और हयग्रीव माधव मंदिर के झंडे संयुक्त रूप से इस त्योहार के प्रतीक हैं। जब पोवा मक्का से जुलूस की

शुरुआत होती है दोनों झंडे एक साथ तिरछे रखे जाते हैं। और फिर, पोवा मक्का के ख़ादिम और माधव मंदिर के डोलोई एक साथ सामने आकर जुलूस की शुरुआत करते हैं। हज़ारों और लोगों की शिरकत के साथ यह जुलूस आगे बढ़ता है। जुलूस के लिए किसी भी राजनीतिक दल से जुड़े व्यक्ति को आमंत्रित नहीं किया जाता है क्योंकि आयोजन समिति का मानना है कि वे इसे किसी भी तरह की राजनीति या राजनीतिक विचारधारा से मुक्त रखना चाहते हैं। केवल साहित्य, कला, सिनेमा या किसी अन्य सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र से जुड़े लोगों को ही आमंत्रित किया जाता है।

यह तस्वीर गरुड़ाचल पहाड़ियों पर स्थित पोवा मक्का की दरगाह के सामने की है। यहीं से मणिकूट उत्सव की शुरुआत होती है।

एक साझी विरासत के रूप में हाजो का मणिकूट उत्सव और साम्प्रदायिक सद्भाव :

हमारी दुनिया विभिन्न जाति, वर्ग, धर्म, जातीयता, भाषा और अन्य कई श्रेणियों का एक अनूठा और समृद्ध मेल है। अक्सरहाँ स्वाभाविक रूप से हम अपनी विभिन्नताओं को समाज में जोड़ने वाले तत्वों के बजाय ज्यादा महत्व देते हैं। यह प्रवृत्ति मानव

समाज को युद्ध, नरसंहार, नस्लसंहार, साम्प्रदायिक दंगों और विभिन्न प्रकार के हिंसक तौर-तरीकों तक ले जाती है। ये हिंसक अभिव्यक्तियाँ न केवल समाज के ताने-बाने को कमजोर करती हैं बल्कि यह एक हिंसक और दुश्मनाना दुनिया का निर्माण करती है। ऐसे में समाज में साझी विरासत बुनियादी मानवीय मूल्यों और नीतियों को बनाए रखने के लिए समन्वयक के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालाँकि आमतौर पर 'साझी विरासत' के इर्द-गिर्द कम ही बातें होती हैं 'सांस्कृतिक विरासत' ज़्यादा प्रचलन में है। 'साझी विरासत' के दायरे में घटनाएँ, त्योहार, शख़्सियतें, संस्कृतियाँ, रीति-रिवाज़, परंपराएँ, भाषा, कला, वास्तुकला आदि वे सभी पहलू शामिल हैं जिन्हें विविध पृष्ठभूमियों के लोग समान भाव से स्वीकार कर पाते हैं। साझी विरासत से जुड़ी घटनाएँ, इतिहास हमारे समाज में स्वीकार्यता, प्रेम, सद्भाव, सह-अस्तित्व जैसे सकारात्मक नतीजे देती हैं। उदाहरण के लिए कई संगीत कार्यक्रम उन दो अलग-अलग मुल्कों के कलाकारों और दर्शकों को करीब लाने में मददगार साबित होते हैं जिनके बीच कभी तनावपूर्ण या युद्ध के संबंध रहे हैं। यहाँ कुछ लोगों की यह राय हो सकती है कि जब हम साझी विरासत की बात करें तो धार्मिक उत्सवों, घटनाओं या धार्मिक पहचानों को न शामिल करना ही बेहतर होगा। पर, हाजो के मणिकूट उत्सव का धार्मिक सम्मेलन समाज को एक रखने वाला तत्व प्रतीत होता है। वास्तव में जुलूस और उत्सव से जुड़ी मुख्य जगहें तो धार्मिक ही हैं पर भागीदारी समावेशी है। इस प्रकार, हाजो का ऐतिहासिक सांप्रदायिक सद्भाव और मणिकूट उत्सव एक साझी विरासत के रूप में यह साबित करते हैं कि टकराहटों और मतभेदों का सामना करके कैसे धार्मिक संस्थान समाज में एक धर्मनिरपेक्ष भूमिका निभा सकते हैं। पश्चिमी देशों के उत्तर दक्षिण एशियाई देशाों के अनेक भागों में धर्म निजी से अधिक सार्वजनिक है। यहाँ हमारा रोज़मर्रा का जीवन कई धार्मिक, सांस्कृतिक प्रथाओं और आध्यात्मिक तौर-तरीकों में पूरी तरह से उलझा हुआ है। चाहे हिंदू धर्म हो, इस्लाम, बौद्ध, सिख या कोई अन्य धर्म हमारा दैनिक जीवन सुबह से शाम तक धार्मिक सिद्धांतों द्वारा संचालित होता है। मंदिर मस्जिदों में सुबह की पूजा, नमाज़ में भाग लेना, गुरुद्वारों में लंगर या मंदिरों के सामूहिक भोज से लेकर खेती से, भोजन से, जुड़े तमाम उत्सव हैं। भारतीयों के जीवन जीने के तरीके से धर्म को अलगाया नहीं जा सकता। इसीलिए सभी धर्मों के लोगों को करीब लाने वाला मणिकूट उत्सव सरीखा आयोजन हमारी समृद्ध साझी विरासत का महत्वपूर्ण प्रतीक है। यह नफ़रत और हिंसा में डूबे लोगों के लिए एक सबक है। औपनिवेशिक काल से हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता के मामलों में बढ़ोत्तरी

दिखती है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने धर्म के नाम पर हिंदुओं और मुसलमानों के बीच नफरत के आधार पर भारतीय समाज में 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाई। भारत को 1947 में स्वतंत्रता मिली और ये एक संविधान के साथ दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र बन गया जो देश के सभी नागरिकों को समानता प्रदान करता है। पर फिर भी भारत में विभिन्न रूपों में साम्प्रदायिकता कायम रही और बड़े पैमाने पर धार्मिक, साम्प्रदायिक हिंसा की कई घटनाएं हुईं। इसमें 1992–93 में कुख्यात हिंदू–मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगे भी शामिल थे जो 6 दिसंबर 1992 में बाबरी मस्जिद के विध्वंस के बाद पूरे देश में एक जंगल की आग की तरह फैल गए। हाजो के साम्प्रदायिक सद्भाव को दर्शाने वाले मणिकूट उत्सव ने उन साम्प्रदायिक भावनाओं को धता बताकर विभिन्न धर्मों के लोगों के साथ मिलकर भव्य तरीके से त्योहार का जश्न मनाया। यह एक अनुकरणीय आयोजन है। जिसे भारत के सभी लोगों को जानना चाहिए।

वास्तव में मणिकूट उत्सव के संदर्भ में देखें तो धार्मिक स्थल और उनके नेता साझी विरासत के इस उत्सव में एक 'धर्मनिरपेक्ष' भूमिका निभाते हैं। हाजो के स्थानीय निवासियों ने एक सामूहिक बातचीत[10] में मुझे बताया कि स्कूली पाठ्यपुस्तकों में यह लिखा है कि पोवा मक्का मुसलमानों के लिए और हयग्रीव माधव मंदिर हिंदुओं के लिए पवित्र है। बातचीत में शामिल लोगों में से एक के लिए यह पाठ्य ज्ञान थोड़ा हैरान करने वाला था क्योंकि उस व्यक्ति ने कहा कि एक हिंदू होने के नाते उसने कभी यह महसूस नहीं किया कि पोवा मक्का विशेषकर मुसलमानों के लिए ही एक पवित्र स्थान हो सकता है। 'हजुर जुबाख़' नामक किताब (जिसमें हाजो के बारे में कई सूचनाएँ हैं) के अनुसार प्राचीन समय से ही स्थानीय हिंदू पोवा मक्का को अपने लिए एक पवित्र स्थान मानते हैं—विशेष रूप से असमी जेठ मास की पूर्णिमा के दौरान सैकड़ों हिंदू तीर्थयात्री पोवा मक्का में अपनी मनोकामना पूरी करने के लिए मोमबत्ती जलाने और प्रार्थना करने जाते हैं। इस इलाके की पारंपरिक मान्यता के अनुसार जेठ महीने की पूर्णिमा की रात पोवा मक्का जाने पर मनोकामना पूरी होती है। इस मान्यता के पीछे की मौखिक परंपरा कहती है कि भगवान कृष्ण ने सुदूर द्वारिका से विष्मक राजा की बेटी रुक्मिणी का अपहरण करने के लिए गरुड़ पक्षी की पीठ पर बैठकर यात्रा की थी। इस विशेष रात को वापस जाते समय भगवान कृष्ण ने इस पवित्र पहाड़ी पर विश्राम किया था क्योंकि गरुड़ (उनका वाहन) थक गया था। लोगों की मान्यता है कि उसी पक्षी के नाम पर इस पहाड़ी को गरुड़ाचल कहा जाता है। इसी मौखिक परंपरा के साथ उस पवित्र रात में हिंदू

उस पहाड़ी की चोटी पर जाते हैं जहाँ पोवा मक्का स्थित है। उसी तरह बौद्धों ने गरुड़ाचल पहाड़ियों और केदार पहाड़ियों दोनों को भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण से जोड़ा है। इसे इस तरह देखें तो इस क्षेत्र की पौराणिक कथाओं में भी एक साझापन है जो समकालीन परंपराओं में भी प्रतिबिंबित होता है। ख़ास बात यह है कि पोवा मक्का में उरुस (उर्स) और माधव मंदिर की पहाड़ी के नीचे माघ मेला एक ही दिन शुरू होते हैं। पोवा मक्का दरगाह शरीफ में माघ के पहले दिन उरुस (उर्स) की शुरुआत होती है और पूर्णिमा के साथ ही यह अंजाम पर पहुँचता है। ठीक इसी तरह माघ मेला भी माघ के पहले ही दिन शुरू होता है। इस दौरान अलग-अलग धर्मों के लोग विभिन्न धार्मिक स्थलों पर आते-जाते हैं। इस तरह मणिकूट उत्सव और हाजो समुदायों के बीच निरंतर धार्मिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान का एक केंद्र बन गया है जो एकता और शांति को मज़बूती दे रहा है।

हयग्रीव माधव मंदिर का प्रवेश द्वार। द्वार के सामने विष्णु पुष्करम है जिसके पास मणिकूट उत्सव मनाया जाता है। जुलूस पोवा मक्का दरगाह शरीफ से आता है।

सामुदायिक भागीदारी और मणिकूट उत्सव :

जैसा कि कई लोगों ने बताया कि मणिकूट उत्सव स्थानीय लोगों की भागीदारी से भरपूर रंगारंग, जीवंत और ऊर्जावान जश्न है। (कोविड-19 महामारी के कारण इस

वर्ष दुर्भाग्य से कोई उत्सव नहीं हुआ और मैं प्रत्यक्ष तौर पर आयोजन में शामिल नहीं हो सका।)

इस उत्सव में रंग-बिरंगी मूर्तियाँ बनाई जाती हैं लोग असम की मशहूर हस्तियों की तरह तैयार होते हैं और राज्य की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का प्रतिनिधित्व करती हुई इस रैली में भाग लेते हैं। स्कूलों और कॉलेजों के युवा लड़के और लड़कियाँ अपने पारंपरिक परिधानों में रैली में भाग लेते हैं। कई जनजाति और सजातीय समूह अपनी पोशाक और संस्कृति के साथ इस आयोजन में भाग लेते हैं। साहित्य, संस्कृति, कला, संगीत, फिल्म आदि से जुड़ी कई प्रमुख हस्तियाँ यहाँ आम लोगों की तरह भागीदारी करती हैं। महिलाएँ अपनी पारंपरिक पोशाकों में सांस्कृतिक जुलूस में तख्तियाँ लेकर भाग लेती हैं जो उनके गाँव या इलाके के नाम को दर्शाती हैं। रैली में स्कूल, मदरसा आदि के कई युवा छात्र शामिल होते हैं। पाठकों के लिए मणिकूट उत्सव को कैमरे की नज़र से देखना एक ज़रूरी पक्ष है। इसलिए इस हिस्से में इस उत्सव के रंग, विविधता और चमक-दमक को तस्वीरों के माध्यम से दिखाने की कोशिश है। ये सभी तस्वीरें 2020 के मणिकूट उत्सव की हैं, जो हाजो के मूल निवासी आशिफ एम सैकिया द्वारा ली गई हैं। (आशिफ मेरे फील्डवर्क के दौरान मेरे सहयोगी रहे हैं।)

पोवा मक्का दरगाह का प्रवेश द्वार और ऑल हाजो स्टूडेंट यूनियन के पीले बैनर के साथ मणिकूट उत्सव के समारोह की शुरुआत।

युवा लड़कियों को जुलूस में भाग लेते देखा जा सकता है। विभिन्न पारंपरिक पोशाकों में युवा लड़कियाँ और लड़के इस तरह से मणिकूट उत्सव में अपने समुदाय और सजातीय पहचान का प्रतिनिधित्व करते हैं।

जुलूस में बोडो जनजाति की युवा लड़कियाँ अपने पारंपरिक नृत्य की मुद्रा में।

ऑल हाजो स्टूडेंट यूनियन के एक स्थानीय सदस्य ने बात करते हुए मुझे बताया कि यह जुलूस का अभिन्न अंग है और यह असम की विविध और मिली-जुली संस्कृति का एक जीवंत नमूना है।

ऑल हाजो स्टूडेंट यूनियन के सदस्य के कथन के अनुसार यह तस्वीर उत्सव में बुजुर्ग महिलाओं की भागीदारी को दर्शाती है। सदोरमेखेला के पारंपरिक असमिया परिधानों में सजी बुजुर्ग महिलाओं के हाथ में एक तख्ती है जिसमें उनका मूल स्थान 'फकीरटोला' लिखा है। प्लेकार्ड में उनके गांव के नाम के अलावा यह भी लिखा है कि त्योहार पोवा मक्का से शुरू होकर माधव मंदिर में समाप्त होता है। उनके अलावा पारंपरिक असमिया सदोरमेखला पहने युवतियों को भी देखा जा सकता है और उनके पीछे पास के मदरसे के कुछ युवा छात्र भी हैं। यह तस्वीर लिंग, आयु, धर्म आदि के संदर्भ में भागीदारी में विविधता को दर्शाती है।

मणिकूट उत्सव का मुख्य आकर्षण है राज्य के विभिन्न मशहूर सांस्कृतिक हस्तियों का स्वाँग रूप धारण करना। तस्वीर में एक शख़्स को गायक डॉ. भूपेन हजारिका के स्वाँग के रूप में देखा जा सकता है।

इस तस्वीर में पोवा मक्का दरगाह से हयग्रीव माधव मंदिर की ओर बढ़ते जुलूस को देखा जा सकता है। तस्वीरों में ऑल असम स्टूडेंट यूनियन के लहराते सफेद झंडे देखे जा सकते हैं। पीले झंडों पर ऑल हाजो स्टूडेंट यूनियन का नाम है।

हाजो की सड़कों पर रैली के इंतज़ार में खड़े लोग।

कैसे एक साझी विरासत के रूप में

मणिकूट उत्सव ने साम्प्रदायिकता का मुकाबला किया :

हाजो में मणिकूट उत्सव की शुरुआत को लेकर अक्सर सवाल उठते रहते हैं। मणिकूट उत्सव पहली बार जनवरी 1992 में आयोजित किया गया था। पूरे भारत में यह दौर राजनीतिक उथल-पुथल से भरा था क्योंकि अयोध्या में राम मंदिर के लिए आंदोलन चल रहा था। मुगल काल के दौरान 16 वीं शताब्दी में स्थापित बाबरी मस्जिद को कई हिंदू भगवान राम का वास्तविक जन्मस्थान मानने का दावा करते हैं। बाद में यह एक संगठित और हिंसक आंदोलन में परिवर्तित हो गया। 6 दिसंबर 1992 को हिंदू कार्यकर्ताओं के एक समूह ने बाबरी मस्जिद को ध्वस्त कर दिया और उसके बाद भारत में व्यापक रूप से हिंद-मुस्लिम साम्प्रदायिक हिंसा हुई जिसमें लगभग दो हज़ार लोग मारे गए। उस दौरान हिंदू-मुस्लिम दंगों का तनाव देश के लगभग हर राज्य में फैल गया था।

पर इस दौर में हाजो में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद भी किसी भी तरह की साम्प्रदायिक हिंसा या तनाव की सूचना नहीं मिली। मेरे क्षेत्रीय दौरों के दौरान कुछ लोगों ने इस साम्प्रदायिक सद्भाव को हाजो में पहले से मौजूद धर्मनिरपेक्ष और साझा इतिहास के साथ जोड़ने का प्रयास किया। हालाँकि हाजो में मणिकूट उत्सव की शुरुआत की

भूमिका और समय के बारे में यहाँ एक प्रासंगिक प्रश्न उठता है। इस आयोजन की पृष्ठभूमि में राम मंदिर आंदोलन की उथल-पुथल और हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण एक कारक रहा है। क्या यह मुमकिन है कि भविष्य में हाजो में किसी ऐसे सांप्रदायिक उभार की आशंका के मद्देनज़र मणिकूट एक इलाज के रूप में देखा गया हो? अपनी यात्रा के दौरान बातचीत करते हुए मैंने यह पाया कि आम लोग मणिकूट उत्सव और राम जन्मभूमि आंदोलन के बीच किसी जुड़ाव से अनभिज्ञ थे। हालांकि हाजो के एक प्रमुख विद्वान हिरेन सैकिया (उपनाम) ने बातचीत में राम जन्मभूमि आंदोलन और हाजो में मणिकूट उत्सव की शुरुआत के बीच संबंध का जिक्र किया। उन्होंने कहा कि निश्चित रूप से उस घटनाक्रम को मणिकूट उत्सव के परिप्रेक्ष्य के रूप में लिया जा सकता है। वह कहता है :

> *हाजो की आबादी में हिंदू और मुसलमान दोनों ही बड़ी संख्या में हैं। पर सभी लोग हाजो के सद्भावपूर्ण और मिली-जुली परंपराओं से वाक़िफ़ नहीं हैं। वे अपने इतिहास के इस रंग के प्रति सचेत जानकारी नहीं रखते। 1980 के उत्तरार्द्ध में जब पूरे भारत में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण अपने उभार पर था, तब भी मणिकूट उत्सव जैसा आयोजन लोकप्रिय हुआ। पर यह विभिन्न हिंदू धार्मिक संगठन की पहलकदमी पर शुरू किए गए रथयात्रा के आयोजन का विरोधी नहीं था। संभवत: हाजो के ऐतिहासिक सांप्रदायिक सद्भाव को बचान और रेखांकित करने की सचेत कोशिशों के रूप में मणिकूट उत्सव का विचार सामने आया।*[11]

वह बार-बार इस बात पर जोर दे रहे थे कि यहाँ की सदियों पुरानी मिली-जुली संस्कृति को बनाए रखने का यह एक अतिरिक्त प्रयास था। 80 के दशक के साम्प्रदायिक उभार की पृष्ठभूमि ने इस आयोजन को एक बड़ी वजह दी वरना हाजो में सामाजिक सद्भाव को रेखांकित करने कि लिए किसी औपचारिक आयोजन या उत्सव की कोई रवायत नहीं थी। हाजो के लोग किसी अनहोनी से आशंकित थे जो समाज में धार्मिक आधार पर ध्रुवीकरण करती। असाधारण परिस्थितियों में जनमा यह उत्सव समय के साथ एक सामान्य सालाना जलसा हो गया और जिसमें आम लोगों की शिरकत भी होने लगी।

बौद्ध सम्बन्ध :

हाजो के बौद्ध संबंध पर विचार किए बिना मणिकूट उत्सव और हाजो के समाज के बारे में बात करना बहुत मुश्किल है। मणिकूट उत्सव एक साझी विरासत के रूप में विभिन्न धर्मों और इनके अनुयायियों को शामिल करता है। इसीलिए यहाँ ऐतिहासिक और समकालीन बौद्ध धर्म पर भी चर्चा होनी चाहिए। हाजो बौद्ध, हिंदू और इस्लामी संस्कृतियों की संवाद स्थली मानी जाती है। दिलचस्प बात यह है कि मणिकूट उत्सव में भाग लेने के लिए पूर्वी हिमालयी क्षेत्र के कई हिस्सों से बौद्ध लोगों के आने का एक बहुत ही जीवंत इतिहास रहा है। प्रकाश दास ने अपनी कथा में कहा कि प्राचीन काल में बहुत से लोग मानते थे कि माधव मंदिर एक बौद्ध मंदिर था। और बौद्ध लोग वहाँ आते थे। यहाँ तक कि कुछ बौद्ध अब भी इस स्थान का भ्रमण करने आते हैं। परन्तु वर्तमान समय में इनकी संख्या नगण्य है। दास के अनुसार जिन्होंने हाजो के इतिहास और संस्कृति पर असमिया भाषा में एक पुस्तक लिखी थी बौद्ध तीर्थयात्रियों की संख्या कई साल पहले हजारों की संख्या में थी और ज़्यादातर वे भूटान से आते थे। उनके शब्दों में—

> *'भूटान से हाजो तक सैकड़ों बौद्ध लोग आते हैं। बचपन में हमने इसे अपनी आँखों से देखा है। वे महीने के हर दिन रोज आते थे। छोटे बच्चे, जवान सभी एक साथ आते और वे पूरे माघ महीने के लिए आते थे।'*

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है बौद्ध लोग गरुड़ाचल पहाड़ियों और केदार पहाड़ियों को भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण से जोड़ते हैं। छठी शताब्दी से पहले बौद्ध धर्म हाजो में फला-फूला लेकिन फिर हिंदू धर्म के क्रमिक उदय के साथ हयग्रीव माधव मंदिर हिंदू धर्म का केंद्र बन गया। हालाँकि यह ज्ञात नहीं है कि उस समय यहाँ एक बौद्ध आबादी मौजूद थी या नहीं। हाजो में अपने क्षेत्रीय कार्य और स्थानीय लोगों के साथ बातचीत के दौरान मुझे हाजो के बौद्ध निवासियों, उनके धर्मांतरण या उनके निर्वासन के बारे में कोई ठोस जानकारी नहीं मिल सकी।

हालाँकि ऐतिहासिक रूप से गरुड़ाचल और केदार पहाड़ियों के अलावा असम के और बौद्ध धर्म के मजबूत संबंधों का सबसे मज़बूत प्रतीक है हाजो का एक स्तंभ। यह टूटा हुआ स्तंभ भी भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण से जुड़ा है। यह स्तंभ पत्थर से बना है और माना जाता है कि इसे लगभग 2400 साल पहले दूसरे बौद्ध धर्मसभा की स्मृति में बनाया गया था। बहुत से लोग इसे अशोक स्तंभ कहते हैं। हालाँकि, इस बात का कोई

ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है कि अशोक अपने शासन काल में वर्तमान हाजो के पास कहीं भी आया था। भारत के दूसरे हिस्सों की तरह असम में भी बौद्ध स्मारक या अन्य रिकॉर्ड आश्चर्यजनक रूप से बहुत कम मिलते हैं और वे भी जन स्मृति में धुँधले पड़ते जा रहे हैं। प्राचीन काल में, पूरी दुनिया से विद्वान बौद्ध साहित्य के लिए भारत आते थे। पूरी दुनिया में इन्हीं अनुदित पुस्तकों/अभिलेखों ने बौद्ध दर्शन और विचार का प्रसार किया। पर, वर्तमान समय में यह समृद्ध बौद्ध परंपरा लोकप्रिय विचार और लेखन में उतना महत्व नहीं पा सकी। हिंदू धर्म के प्रबल विमर्श ने भारत में बौद्ध धर्म को हाशिये पर डाल दिया बल्कि इसे हिंदू धर्म के एक उपांग के तौर पर समेट दिया।

यहाँ तक कि राजा अशोक ने भी हजारों स्तंभ बनवाए थे पर वर्तमान समय में केवल कुछ ही पाए गए हैं। ये स्तूप भी वैसे ही गायब हो गए जैसे भारत से प्राचीन बौद्ध धर्म गायब हो गया है। प्राचीन काल में एक भूकंप के कारण ब्रह्मपुत्र नदी हाजो के उत्तर के बजाय दक्षिण में बहने लगी। इस भूकंप से असम को बहुत नुकसान हुआ और इसके पुराने स्थापत्य और मंदिर बस खंडहर बन कर रह गए। हाजो के मंदिरों में काफी टूट-फूट हुई और स्तंभ का भी यही हश्र हुआ। यद्यपि स्तंभ का आधार अभी भी अपने मूल स्थान पर है। पर दूसरे, तीसरे और चौथे टुकड़े अलग-अलग स्थानों पर पड़े हैं। चौथा टुकड़ा खोजे जाने तक स्तंभ पूरा नहीं हुआ था। यह स्तंभ राजा अशोक के समय से 150 वर्ष पूर्व का माना जाता है। *हालांकि, यह स्तंभ मौर्य स्तंभों*[12] *से कुछ समानता रखता है। पर इसकी कुछ अन्य बारीकियाँ और मल्ल स्तंभ की विशिष्टताओं में भी समानता है। (तालुकदार,1959, पृष्ठ 475)।* दिलचस्प बात यह है कि मेरे क्षेत्रीय कार्य के दौरान प्राचीन हाजो में बौद्ध उपस्थिति की चर्चा करने में कई लोग उदासीन थे। बातचीत के दौरान ये सभी बौद्ध संबंध को बहुत ही अस्पष्ट और आकस्मिक रूप से तो संदर्भित कर रहे थे पर आज उपस्थित सबूतों की बात नहीं कर रहे थे। हो सकता है कि हिंदू धर्म के उदय और बौद्ध धर्म के पतन जैसे विषय पर चर्चा करने में वह असहज थे। गुवाहाटी में भगवान बुद्ध की एक पत्थर की छवि देखी जा सकती है जो सुकरेश्वर मंदिर में मिली है। यह हाजो से बहुत दूर नहीं है। इस चतुर्भुज प्रतिमा के दो अतिरिक्त हाथ स्पष्ट रूप से कुहनी से जुड़े दिखते हैं जबकि हिंदू परंपरा की अन्य चतुर्भुज प्रतिमाओं के अतिरिक्त हाथ ठीक कंधे से ही जुड़े होते हैं, न कि कुहनी से। चूँकि इस पत्थर में ऊपर इसे जोड़ने की जगह नहीं थी तो गदा व पद्मधारी दो छोटे हाथ जोड़ दिए गए। इसे जनार्दन बुद्ध (तालुकदार, 1959 पृष्ठ 474) के रूप में जाना जाता है। यह विशेष छवि और इसके पास के अन्य शैव मंदिर हमें याद दिलाते हैं कि उस दौर में संभवत: बौद्ध और शैव धर्म सबसे प्रमुख धार्मिक शक्तियाँ थीं।

हालांकि अब पहले की तुलना में मणिकूट उत्सव या तीर्थयात्रा में बौद्ध लोगों का आना धीरे-धीरे कम हो गया है। 2002 में जब श्री प्रकाश दास इस उत्सव के कार्यकारी सचिव थे, उन्होंने बौद्ध लोगों को भाग लेने के लिए आमंत्रित किया क्योंकि अब उनकी स्वाभाविक भागीदारी नहीं रह गई है। 'दुबाखी' नामक लोगों की एक दिलचस्प श्रेणी आयोजकों और भूटान में बौद्ध धर्म का पालन करने वाले लोगों के बीच कड़ी का काम करती है। वे हाजो के बौद्ध लोगों के साथ संबंध रखते हैं। एक छात्र नेता ने एक अप्रिय और दुखद घटना के बारे में बताया जिससे मणिकूट उत्सव में बौद्ध भागीदारी भी प्रभावित हुई। गुवाहाटी से करीब बीस किलोमीटर दूर अमिनगाँव नाम के इलाक़े में एक बौद्ध काफ़िले पर हमला किया गया। अमिनगाँव में उनका विश्राम गृह है और कुछ साल पहले बौद्ध समूह की एक महिला की बदमाशों के एक समूह ने हत्या कर दी थी। उस घटना के बाद से भूटान के बौद्ध लोगों में असुरक्षा की भावना पैदा हो गई और उनका आना बहुत कम हो गया।

एक स्थानीय अकादमिशियन श्री सैकिया ने बातचीत में हाजो में बौद्ध धर्मावलंबियों के दूर होते जाने पर अपनी राय रखी थी। उन्होंने कहा कि उनके बचपन में कई लोग भूटान से आते थे। वे अपना स्थानीय माल यहाँ लाकर बेचते थे। उसके बाद वे माधव मंदिर जाते क्योंकि उनकी मान्यता है कि भगवान बुद्ध को माधव मंदिर के पास एक साल के पेड़ के नीचे ज्ञान या महापरिनिर्वाण मिला था। पर कई बार उन्हें स्थानीय लोगों द्वारा अपमानित किया गया या समुचित पहचान नहीं मिली। हिंदू धर्म के बढ़ते प्रभाव के साथ धीरे-धीरे हाजो में बौद्ध धर्म के प्रभाव में गिरावट आई। हाजो की यात्रा करने वाले बौद्ध उपेक्षित और अनधिकृत महसूस करते थे। हाजो के माधव मंदिर में हिंदू प्रभाव और अनुष्ठानों का बोलबाला था। उन्होंने उनके खान-पान के बारे में एक दिलचस्प वाकया सुनाया। उनके बचपन में उन्होंने देखा था कि वे पशुओं का मांस सुखा लेते। इस तरह तैयार मांस को अपने साथ वापस भी ले जाते थे।

एक लोकप्रिय गलतफहमी और उसका सच :

अधिकांश सार्वजनिक स्मृति और लोकप्रिय लेखन या बातचीत में लोगों का कहना है कि मणिकूट उत्सव एक साझी विरासत के रूप में दिसंबर 1992 में बाबरी मस्जिद के विध्वंस के बाद ही शुरू हुआ था। पूरे देश में हिंदू-मुस्लिम साम्प्रदायिक

दंगे फैल गए थे। हालाँकि यह पूरी तरह से सच नहीं है क्योंकि यह उत्सव उससे लगभग एक साल पहले जनवरी 1992 में शुरू हुआ था। तथ्य यह है कि 1992 में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद इसकी ज़िम्मेदारी ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) हाजो इकाई ने ले ली। पर इसकी शुरुआत मणिकूट साहित्य सभा ने जनवरी 1992 में की थी। मुझे इस बारे में कोई ठोस जानकारी नहीं मिली कि ऑल हाजो स्टूडेंट यूनियन ने उत्सव की कमान क्यों और कैसे संभाली। लेकिन समय के साथ स्थानीय लोगों के साथ कई बातचीत के बाद मुझे पता चला कि पहली बार यह एक छोटा आयोजन था। ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) बड़ा संगठन है जिसके बहुत सारे सदस्य हैं जो समाज में प्रभाव डालते हैं। उन्होंने इसे एक संगठित और भव्य रूप दिया, जो मणिकूट साहित्य समाज के कुछ व्यक्तियों द्वारा संभव नहीं था।

चूंकि बाबरी मस्जिद के विध्वंस के बाद पूरे देश में व्यापक साम्प्रदायिक हिंसा हुई थी। हाजो की ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) इकाई हाजो के सदियों पुराने साम्प्रदायिक सद्भाव का जश्न मनाने के लिए एक साम्प्रदायिक सद्भाव रैली और उत्सव करना चाहती थी। यह जुलूस और उत्सव देश के सभी लोगों से साम्प्रदायिक हिंसा में शामिल न होने और भारत की अनेकता में एकता का जश्न मनाने के लिए एक प्रतीकात्मक संकेत था। इस प्रचलित गलत सूचना का मुकाबला करने के लिए स्वयं प्रकाश दास ने कहा :

> *'बाबरी मस्जिद 6 दिसंबर, 1992 को ध्वस्त कर दी गई। लेकिन हमने पहली बार इसका आयोजन जनवरी 1992 में किया था। तो स्वाभाविक रूप से यह घटना बाबरी मस्जिद के विध्वंस से पहले हुई थी। मणिकूट उत्सव के बारे में बात करते समय लोगों द्वारा की जाने वाली यह एक सामान्य गलती है। आपको इसे ठीक से लिखना चाहिए। लोग अपने तरीके से इतिहास लिखने की कोशिश करते हैं। जब बाबरी मस्जिद को तोड़ा गया तो हाजो के लोगों और समाज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। फिर जब 1993 में अगली जनवरी आई तो हाजो की AASU इकाई ने मणिकूट उत्सव की जिम्मेदारी ली। मणिकूट साहित्य समाज ने इसके आयोजन में निरंतरता नहीं रखी। पहली बार यह एक सांस्कृतिक रैली थी लेकिन बाद में यह 'संवंदय' (एकता का जुलूस) बन गई।*[13]

निष्कर्ष : इस साझी विरासत पर

राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव

वर्षों से मणिकूट उत्सव ने राजनीतिक ताकतों से दूरी बनाकर अपनी स्वायत्तता बनाए रखी है। अक्सर कहा जाता है कि हाल के कुछ वर्षों में भारत में सांप्रदायिक घटनाओं में बढ़ोत्तरी देखी गई है और बहुसंख्यक अल्पसंख्यक की धार्मिक विभिन्नता का राजनैतिक इस्तेमाल अक्सरहाँ दोनों तरफ के लोगों को भड़काने के लिए किया जाता है। इस शोध के सिलसिले में मेरी कई लोगों से बात हुई जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि हालिया समय में देश के दूसरे हिस्सों की तरह हाजो के भी सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में धार्मिक आधार पर ध्रुवीकरण काफी बढ़ा है। फिर भी, हम कह सकते हैं कि मणिकूट उत्सव ने अपनी समेकित और स्वायत्त पहचान बनाए रखी है तथा अराजक तत्वों से इसे महफूज रखा है। इस माहौल में मुसलमान या अन्य अल्पसंख्यक समूह गाहे-बगाहे इस इलाके में बढ़ते असुरक्षित माहौल की बात करते हैं। बहुसंख्यकवादी ताकतों का इस प्रतिक्रिया पर आलोचनात्मक रवैया रहा है। पर अब यह ध्रुवीकरण आमतौर पर बातचीत या सार्वजनिक चर्चाओं का एक मुद्दा है। आज के समय में विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थानों पर भी इसका असर देखा जा सकता है। खान-पान की आदतों व पसंदगी, धर्मांतरण जैसे मुद्दों पर हिंसक वारदातें हुई हैं और यह सब कुछ अब आमतौर पर लोगों की सोच, उनकी चर्चा का हिस्सा बन चुका है। इन तथ्यों की मदद से मुस्लिम जन सांख्यिकी और राजनैतिक आक्रमकता का असम के जनसांख्यिकी और धार्मिक संरचना पर प्रभाव का एक भ्रामक विमर्श तैयार किया गया है। वास्तव में पिछले कुछ दशकों के जनसांख्यिकी और संस्कृति असम की राजनीति में एक निर्णायक तत्व रहा है। हालाँकि मेरे हाजो प्रवास और स्थानीय लोगों से बातचीत के दौरान सभी ने मणिकूट उत्सव का महिमामंडन किया और कहा कि इस तरह की धार्मिक साम्प्रदायिकता को कभी भी हाजो के समाज को प्रभावित नहीं करने दिया जाएगा। इस संदर्भ में हाल के दिनों में या उससे पहले भी साम्प्रदायिकता की बढ़ती बहस में मणिकूट उत्सव को कभी नहीं देखा गया। घटना की गैर राजनीतिक और धर्मनिरपेक्ष प्रकृति के बारे में बात करने के लिए एक स्थानीय निवासी (जो अपना नाम प्रकट नहीं करना चाहता) ने हमें बताया—

> *'हमारा एक नियम है कि हम किसी भी राजनीतिक नेता को अपने त्योहार का उद्घाटन या जश्न मनाने के लिए आमंत्रित नहीं करते हैं।*

जैसे मैं भी कांग्रेस से जुड़ा था या समर्थन करता था। ऐसे में हर कोई किसी न किसी राजनीतिक दल का समर्थन करता है। लेकिन राजनीतिक नेताओं को मणिकूट उत्सव के एकता उत्सव का नेतृत्व करने की अनुमति नहीं है। कला और संस्कृति या साहित्य से जुड़े लोगों को ही हम बुलाते हैं। कुछ नेता अपनी इच्छा से आ सकते हैं और हम उन्हें रोकते नहीं हैं पर वे भी आम आदमी की तरह भाग लेते हैं। मान लीजिए हरेन दास हमारे विधायक हैं। अगर वे आते हैं और हमारे साथ जुड़ते हैं तो उनका स्वागत है। यह आयोजन वास्तव में लगातार प्रगति कर रहा है। जैसे जब से ऑल असम स्टूडेंट यूनियन (AASU) ने जुलूस की कमान संभाली है तब से यह भव्य हो गया है। पहली बार हमने राज्यपाल को समारोह का उद्घाटन करने के लिए आमंत्रित किया। लेकिन निश्चित रूप से ऐसा सिर्फ पहली बार ही हुआ था।[14]

मेरे फील्डवर्क के दौरान ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) हाजो इकाई के पदाधिकारियों में से एक ने मुझे बताया कि यह त्योहार राजनीति से परे है और राजनीति में हाल के किसी भी बदलाव का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वास्तव में वे इस आयोजन में भाग लेने के लिए अधिक संख्या में सजातीय समूहों को आमंत्रित करके त्योहार की प्रकृति का विस्तार कर रहे हैं। कई जनजातियों जैसे गारो, राभा आदि लोगों को आमंत्रित किया जाता है और वे कम से कम सात जनजातीय सजातीय समूहों को त्योहार में शामिल करने की कोशिश कर रहे हैं। कई मुस्लिम छात्र जो हाजो के इस्लामी धार्मिक संस्थानों में अध्ययन कर रहे हैं वे भी उत्सव में भाग लेते हैं। फिर कॉलेज के छात्र बिहू नृत्य, अन्य पारंपरिक नृत्य रूपों आदि का प्रदर्शन करते हैं। डोलोई और खादिम जो उत्सव के सबसे प्रतिष्ठित व्यक्तित्व हैं अपने हाथों में ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) का झंडा रखते हैं। सांस्कृतिक जुलूस में विविधता धीरे-धीरे बढ़ रही है। यहाँ तक कि नेशनल कैडेट कॉर्प्स (NCC) की एक इकाई भी इस आयोजन में मदद करती थी और स्वयंसेवा करती थी। उनका कहना है कि वे वास्तव में प्रेम के संदेश को फैलाने के लिए भविष्य में इसे आयोजित करने का एक और भव्य तरीका तलाश रहे हैं।

आख़िर में मणिकूट उत्सव सरीखे आयोजन आज भी हमारे समाज के लिए बेहद ज़रूरी धर्मनिरपेक्ष परंपराओं और सामाजिक सद्भाव के महत्वपूर्ण प्रतीक हैं। भारतीय समाज में बहुविध मौजूद धार्मिक सम्प्रदायवाद का मुकाबला करने वाली यह एक अनूठा आयोजन है। मूलतः बहु सांस्कृतिक, बहुजातीय, बहुभाषी हमारे धर्म निरपेक्ष लोकाचारों को संरक्षित करने की दिशा में मणिकूट एक रोशनी की किरण है

जो हाजो और असम के समाज के ध्रुवीकरण के सतत प्रयासों के सामने भी टिकी हुई है। अगर आने वाला वक्त और मुश्किल हो तो यह उत्सव अपनी परंपरा को किस रूप में जीवित रखेगा, इसे देखना एक दिलचस्प अनुभव होगा।

फुटनोट :

1. पोवा-मक्का दरगाह की देखरेख के ज़िम्मेदार व्यक्ति को ख़ादिम कहते हैं.
2. बातचीत के दौरान एक शख्स ने बताया कि कोच शासकों के समय में हाजो एक अलग राज्य था। यहां की संपूर्ण भूमि, लोग व अन्य संपत्तियों का नियंत्रण यहां के पांचों देवालयों के हाथों में था और डोलोई इसका ज़िम्मेदार व्यक्ति था। डोलोई स्थानीय भाषा का शब्द है, यानी ऐसा व्यक्ति जो राजा की तरह एक इलाके पर शासन करे और जिसके निर्णय मान्य हों।
3. ज़िकिर असमिया भाषा में लिखे गए इस्लामी धार्मिक सूफी गीत हैं। ज़्यादातर गीतों की रचना यहां बेहद लोकप्रिय संत अजान पीर ने की है। नाम प्रसंग असम के वैष्णव परंपरा के धार्मिक गीत हैं। बिहू गीत असम के बिहू उत्सव से जुड़े गीत हैं। इन गीतों का अपना अनूठा लय और ताल है।
4. वैष्णव सत्र असम की वैष्णव परंपरा से जुड़े सांस्थानिक केंद्र हैं।
5. परंपरा से अहोम राजशाही (1226-1826) के दौरान लिखे गए ऐतिहासिक पाठ बुरंजी कहे जाते हैं।
6. 12 मार्च, 2021 को प्रकाश दास के साथ व्यक्तिगत बातचीत।
7. स्थानीय भाषा में नदी का किनारा घाट कहा जाता है। भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न हिस्सों में इस नाम का इस्तेमाल किया जाता है।
8. 15 अप्रैल 2021 को हिरेन सैकिया के साथ साक्षात्कार
9. उर्स सूफी संत की पुण्य तिथि पर उनके दरगाह या आसपास किया जाने वाला आयोजन है।
10. हाजो के एक स्थानीय निवासी से बातचीत (13 मार्च, 2021)।
11. हिरेन सैकिया से साक्षात्कार (15 अप्रैल 2021)।
12. दक्षिण एशिया में मौर्य साम्राज्य सबसे प्रभावशाली साम्राज्यों में से एक था जिसकी स्थापना चंद्रगुप्त मौर्य ने की थी। इस साम्राज्य का केंद्र वर्तमान पटना शहर है। इसकी स्थापना लगभग 321 ई.पू. हुई और 185 ई.पू. तक इसका अंत हो गया। मौर्य साम्राज्य का सर्वाधिक मशहूर शासक अशोक था।
13. प्रकाश दास से साक्षात्कार (12 मार्च, 2021)।
14. हाजो के एक वरिष्ठ निवासी से साक्षात्कार (14 मार्च, 2021)।

आभार :

हाजो में मेरे पूरे फील्डवर्क में मेरी मदद करने और कई स्थानीय निवासियों से मेरा परिचय कराने के लिए मैं आशिफ एम. सैकिया का तहे दिल से आभारी हूँ। मैं आईएसडी टीम का भी आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपने सुझाव और टिप्पणियों से इसमें विभिन्न आयाम जोड़ने में मेरी मदद की।

सन्दर्भ :

1. बोरा, रिंकू. (2016) श्रीमंत शंकरदेव का नव-वैष्णववाद : असम में एक महान सामाजिक-सांस्कृतिक क्रांति। विज्ञानेतर विषय और सामाजिक विज्ञान के एमएसएसवी जर्नल, 1 (1), 1-11.
2. दास, अच्युत चंद्र. (2016)। स्मृति खोफुरा। बिटुपन ज्योति प्रकाशन।
3. दास, प्रकाश. (2017) हजूरखुबख। प्रफुल्ल पाकख।
4. नेहरू, जवाहरलाल. (1937)। भारत की एकता। विदेश मामले, 16,231-243।
5. सैकिया, सलीम एम.। (2009)। उत्तर-औपनिवेशिक काल में हाजो समाज पर धार्मिक संस्थाओं का प्रभाव (अप्रकाशित एम.फिल. थीसिस)। असम विश्वविद्यालय, सिलचर, भारत।
6. तालुकदार, वाई.सी. (1959)। हाजो का बौद्ध स्तंभ। भारतीय इतिहास कांग्रेस की कार्यवाही, 22, 473-476।

isd **इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी**

फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस, 62-ए, लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली-110067

टेलीफोन : 091-011-26177904, टेलीफैक्स : 091-011-26177904

ई-मेल : prakashan.isd@gmail.com, notowar.isd@gmail.com

वेबसाइट : www.isd.net.in